बच्चों के व्यक्तित्त्व के विकास में शिक्षा की भूमिका

डॉ. रूबी कुमारी*

सार–संक्षेप–शिक्षा जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है तथा अनुभव के द्वारा हमारे व्यवहार में जो भी परिर्वतन आते है वे सभी शिक्षा के फलस्वरूप है। शिक्षा का अर्थ ही अनुभवों का निर्माण एवं पूनर्निमाण है और इस दृष्टि से पाठशाला के बाहर भी जो अनुभव प्राप्त किये जाते है वे सभी शिक्षा के अंग है। शिक्षा ऐसी प्रक्रिया एवं प्रयास है जिसमें मानव समाज के अधिक परिपक्व लोग, न्यून परिपक्व व्यक्तियों की अधिकाधिक परिपक्वता के लिए प्रयास करते है तथा इस प्रकार शिक्षा मानव जीवन को अच्छा बनाने में योगदान करते है। शिक्षा तथा मानव जाति का जन्म जन्मान्तर का संबंध है। शिक्षा आंतरिक वृद्धि तथा विकास की न समाप्त होने वाली प्रक्रिया हैं और इसकी अवधि जन्म से मृत्यु तक फैली हुई है। शिक्षा का वास्तविक अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को प्रगतिशील, सांस्कृतिक एवं सभ्य बनाना है। यह व्यक्ति तथा समाज की वृद्धि के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। शिक्षा द्वारा ही मनुष्य अपनी विचार शक्ति तथा तर्क शक्ति, समस्या, समाधान तथा बौद्धिकता, प्रतिभा तथा रूझान, घनात्मक भावुकता तथा कुशलता और अच्छे मूल्यों एवं रूचियों को विकसित करता है इसी के द्वारा ही वह मानवीय, सामाजिक, नैतिक और अध्यात्मिक प्राणी में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य प्रतिदिन तथा हर क्षण कुछ न कुछ सीखता रहता है। इसका समस्त जीवन ही शिक्षा है। अतः शिक्षा एक निरन्तर तथा गतिशील प्रक्रिया है।

परिचय–शिक्षा एक निरन्तर प्रक्रिया है जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि सें विकसित, स्वतंत्र एवं चेतनाभूति मानव को ईश्वर के प्रति उच्च अनुकूलन कराती है। जिसकी अभिव्यक्ति मानव के बौद्धिक, संवेगात्मक और संकल्पित वातावरण में होती है। ''शिक्षा सीखने की क्रिया द्वारा व्यक्ति का विकास है, जो उसके शारीरिक विकास से भिन्न है''। शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली विकास प्रक्रिया है। शिक्षा जीवन के घनिष्ट रूप से संबंधित है। शिक्षा वह संस्कृति है जो हर पीढ़ी

***ग्राम+पो.– करजापट्टी, भाया– पिंडारूच, थाना– कमतौल, जिला– दरभंगा**

को प्रदान की जाती है। वह कम से कम इसे उसी रूप में बनाये रखे और संभव हो तो इसके स्तर में वृद्धि करते हुए उपर उठाये। शिक्षा सतत अनुभवों के पूनर्संगठन और पूनर्रचना की प्रक्रिया है।

पारिवारिक शिक्षा मानव जीवन का आधार है। मानव का विकास और उन्न्यन शिक्षा पर ही निर्भर है। शिक्षा व्यक्तित्व का निर्माण भी करती है और श्रृंगार भी करती है। जन्म के समय बालक पशुवत आचरण करता है क्योंकि वह केवल अहम होता है और अपने मूल प्रवृतियों से प्ररित होकर कार्य करता है, शिक्षा उसकी इन प्रवृतियों का उचित मार्गदर्शन करके उसे परिपक्वता प्रदान करती है, उसके व्यवहार को, उसके आचरण को, उसके क्रियाकलापों को, उचित और समाजोपयोगी बनाती है। शिक्षा उसमें रचनात्मक शक्ति की विकास करती है। शिक्षा माता के समान पालन पोषण करती है, पिता के समान उचित मार्गदर्शन द्वारा अपने कार्यों में लगाती है तथा पत्नी की भाँति संसारिक चिंताओं को दूर करके प्रसन्नता प्रदान करती है। शिक्षा के द्वारा हमारी कृति का प्रकाश चारों ओर फैलता है तथा शिक्षा ही हमारी समस्याओं को सुलझाती है एवं हमारी जीवन को सुसंस्कृत बनाती है। हम देश में रहें अथवा विदेश में शिक्षा प्रत्येक स्थान पर हमारी सहायता करती है। इस प्रकार कल्पलता की भाँति शिक्षा हमारे लिए क्या–क्या नहीं करतीं। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार सूर्य की किरण पाकर कमल खिल उठता है और सूर्यास्त पर कुम्हलाता है, उसी प्रकार शिक्षा रूपी प्रकाश को पाकर प्रत्येक व्यक्ति कमल के फूल के भाँति खिल उठता है। वहीं अशिक्षित रहने पर दरिद्रता, शोक एवं कष्ट के अंधकार में डुबा रहता है। संक्षेप में कहे तो– शिक्षा वह प्रकाश है जिसके द्वारा बालक की समस्त शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा अध्यात्मिक शक्तियों का विकास होता है और वह समाज का एक उत्तरदायी घटक एवं राष्ट्र का प्रखर चरित्र संपन्न नागरिक बनकर समाज की सर्वांगिण विकास में अपनी शक्ति का उतरोत्तर प्रयोग करने की भावना से ओत–प्रोत होकर संस्कृति तथा सभ्यता को पूनर्जीवित एवं पूनर्स्थापित करने के लिए प्रेरित हो जाता है।

जिस प्रकार शिक्षा एक ओर बालक का सर्वांगिण विकास करके उसे तेजस्वी, बुद्धिमान, चरित्रवान तथा बीर बनाती है उसी प्रकार दुसरी ओर शिक्षा समाज की उन्नति के लिए भी एक आवश्यक एवं शक्तिशाली साधन है।

दूसरे शब्दों में व्यक्ति की भाँति समाज भी शिक्षा के चमत्कार से लाभान्वित होता है। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढ़ी के बालकों को उच्च आदर्शों, आशाओं, आकांक्षाओं, विश्वासों तथा परम्पराओं आदि सांस्कृतिक संपति को इस प्रकार से हस्तांतरित करता है। उनके हृदय में देश प्रेम तथा त्याग की भावना

प्रज्वलित हो जाती है जब ऐसी भावनाओं तथा आदर्शो से भरे हुए बालक तैयार होकर समाज अथवा देश की सेवा व्रत धारण करके मैदान में निकलेंगे तथा अपने जीवन में त्याग से अनुकरनीय कार्य करेंगे तो समाज भी निरन्तर उन्नति के शिखर पर चढ़ता ही रहेगा। इस व्यक्ति और समाज दानों के विकास में शिक्षा परम आवश्यक है।

बच्चों का विकास, विकास के विभिन्न पहलुओं से प्रभावित होता है जैसे शारीरिक विकास, गत्यात्मक विकास, संवेगात्मक विकास, नैतिक विकास आदि। विकास के सभी पहलूओं का एक दूसरे पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। एक बच्चा जो अपने स्कूली जीवन के शुरूआती सालों में बहुत बीमार रहता है और आए दिन स्कूल से छुट्टी लेता है, वह पढ़ने में पिछड़ सकता है। इसके साथ संभव है कि इस बच्चे के दोस्त भी कम ही हों। तो हम देख रहे हैं कि शारीरिक विकास और स्वास्थ्य का बच्चों के अन्य विकास से जुड़ाव है। प्रत्येक बच्चा शारीरिक रूप से दूसरे बच्चे से भिन्न होता है। शिक्षकों का बच्चों की इस भिन्नता के प्रति संवेदनशील होना आवश्यक है। अन्य जीव जंतुओं की तुलना में, मनुष्यों में शारीरिक विकास की अवधि अधिक लंबी होती है। अपने जीवन के लगभग 20 साल में हम अनेक प्रकार के शारीरिक व मानसिक विकास की प्रक्रिया से गुज़रते हैं।

शारीरिक विकास का सन्दर्भ शारीरिक वृद्धि और शरीर में आए विभिन्न परिवर्तनों से है जिसमें व्यक्ति के आकर, भार, ऊँचाई, हड्डियों की मोटाई, दृष्टि, श्रवण आदि में आए परिवर्तन सम्मिलित होते हैं। विभिन्न विकासात्मक अवस्थाओं में बच्चे के आकर, शक्ति, अंगों तथा ज्ञानेन्द्रियों में विशिष्ट परिवर्तन आते हैं। जैसे–जैसे कोई शारीरिक परिवर्तन आता है वैसे–वैसे बच्चे में नई योग्यताएं तथा कौशल विकसित हो जाते हैं। शारीरिक विकास के साथ ही मानसिक विकास भी जुड़ा हुआ है। शारीरिक रूप से कितने बदल गए हैं और जैसे–जैसे हम बड़े होते जा रहे हैं, हम में कितना परिवर्त्तन आता जा रहा है। हम इस दुनिया में छोटे–छोटे जीवों के रूप में आते हैं परंतु शैशवावस्था में बड़ी तीव्रता से बढ़ते हैं। बाल्यावस्था में थोड़ा धीमें बढ़ते हैं तथा किशोरावस्था में पुनः बड़ी तेजी से बढ़ते हैं और इसके पश्चात फिर प्रौढ़ावस्था में बढ़ने की गति धीमी पड़ती जाती है जो वृद्धावस्था से लेकर मृत्युपर्यन्त चलती रहती है। समय के साथ–साथ विकास काल में बच्चों में काफी परिवर्तन आते हैं। शरीर के आकार में आए अधिक सुस्पष्ट परिवर्तनों के साथ–साथ शरीर साम्यों (अनुपात), कंकाल संरचना, माँसपेशियों तथा शरीर के आंतरिक अंगों में भी सुस्पष्ट परिवर्तन आते रहते हैं। बच्चों के शरीर के आकार, समानुपातों (साम्यों) और माँसपेशियों में आए परिवर्तन बहुत सारे स्थूल और सूक्ष्म

गत्यात्मक कौशलों के विकास में सहायता करते हैं। शारीरिक विकास में सबसे महत्वपूर्ण है, बच्चों के शरीर के आकार में आए व्यापक परिवर्तन जिन्हें उनके कद एवं भार में आए स्पष्ट परिवर्तनों के माध्यम से देखा जा सकता है। शैशवकाल में ये परिवर्त्तन अत्यधिक तीव्र होते हैं– जन्म के पश्चात् किसी अन्य अवस्था में आए परिवर्तनों की तुलना में प्रथम दो वर्षों में वृद्धि अत्यंत तीव्र होती है। दो वर्ष के बाद वृद्धि दर कुछ कम हो जाती है।

बच्चों का मस्तिष्क विकास उनके अन्य विकासों का आधार है। बच्चे जन्म के समय ही लगभग पूर्ण रूप से विकसित मस्तिष्क लेकर आते हैं। अमूमन गर्भ के पाँचवें सप्ताह से बीसवें सप्ताह तक, 50,000 से 1,00,000 मस्तिष्क की कोशिकाओं का विकास होता है। छः महीने के बच्चे के दिमाग़ का वज़न वयस्क स्थिति का आधा हो जाता है और छः साल की उम्र तक लगभग 90 प्रतिशत वज़न हासिल कर लेता है। परन्तु मानसिक विकास का ठीक से होना या नहीं होना बच्चों द्वारा जन्मोपरान्त होने वाले अनुभवों पर निर्भर करता है।

मस्तिष्क की कोशिकाएं बाकी शरीर की कोशिकाओं से अलग होती हैं। वे एक दूसरे से बिल्कुल सटकर नहीं रखी होतीं। उनके बीच में दूरी होती हैं, कोशिका से निकले रेशे, एक–दूसरे से सम्पर्क बनाते हैं। कोशिकाओं का जीवित रहना उन्हें मिलने वाले उद्दीपन पर निर्भर करता है। जिन कोशिकाओं को वातावरण से उत्तेजनाएं मिलती रहती हैं वे नए सम्पर्क बनाती हैं और जीवित रहती हैं, जिन्हें कोई उत्तेजना नहीं मिलती वे मर जाते हैं। इसलिए बच्चों के शुरूआती सालों में जब दिमाग़ी कोशिकाएं नए–नए सम्पर्क बना रही हैं उन्हें उपयुक्त उद्दीपन मिलना आवश्यक है। सुनना, छूना, चखना, देखना आदि मस्तिष्क विकास के लिए आधार बनते हैं। यानि यह कहा जा सकता है कि शुरुआती अनुभव और पोषण जीवनपर्यन्त चलने वाली सीखने की प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

जन्म के समय बच्चे का ज्यादातर वज़न सिर में होता है पर अगले दो सालों में यह वयस्क के जैसे डीलडौल और अनुपात प्राप्त करने लगते हैं। इस समय में बच्चों के सिर का नाप भी बढ़ता जाता है और उसे सिर की परिधि नापकर जाना जाता है। दिमाग के अलग–अलग हिस्सों की अलग–अलग ज़िम्मेदारी होती है, जैसे– ज्ञानेन्द्रियों से जानकारी हासिल करना, शरीर को हिलने के आदेश देना आदि। शोध से यह पता चला है कि इन हिस्सों का विकास उसी क्रम में होता है यह देखा गया है कि मस्तिष्क के उस हिस्से का विकास पहले होता है जो सिर बाजू और सीने को नियंत्रित करते हैं, बजाय उसके जो पैरों को नियंत्रित करते हैं। दिमाग का आगे का हिस्सा जो विचारों और चेतना के लिए जिम्मेदार है, वह सबसे

आखिर में विकसित होता है। ठीक से क्रियाशील यह लगभग 2 साल की उम्र में होता है पर इसका विकास 20–30 साल की उम्र तक चलता रहता है। बच्चों के सर्वांगीण विकास में उनके मानसिक विकास का होना अति आवश्यक है। मानसिक विकास का संबंध माँसपेशियों के कार्य तथा शरीर में गतियों या क्रियाओं की उत्पत्ति से है जो मानसिक क्रिया के सचेतन नियंत्रण के अंतर्गत होती है। यह गत्यात्मक कौशलों से निर्देशित होती हैं जैसे– गति, समन्वय, परिचालन, दक्षता, बल तथा चाल। शरीरिक विकास व्यक्तित्व के सभी पक्षों के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, इसलिए इस पर विशेष ध्यान दिया जाना अति आवश्यक है। बच्चे अपने बचपन तथा किशोरावस्था का एक सार्थक भाग विद्यालय में शिक्षकों के साथ बिताते हैं। शिक्षक को वे अपना आदर्श मानते हैं तथा उनके व्यवहार से प्रभावित होते हैं। ऐसे में शिक्षक उनके शारीरिक एवं मानसिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे बच्चों में मौजूद खूबियों एवं कमियों को पहचान कर उनके अभिभावक को बता सकते हैं। जिससे उनके अभिभावक उन बच्चों के सम्पूर्ण विकास के लिए उचित कदम उठा सकें।

निष्कर्ष–शिक्षा ही मानव को असत्य से सत्य की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञानता से ज्ञान की ओर, और मृत्यु से अमृत्व की ओर जाने के लिए प्रेरित करती है, प्रात्साहित करती हैं और निर्देशित करती है। शिक्षा ही मानव जीवन में उदारता, उच्चता, उत्कृष्टता और पवित्रता लाती है। शिक्षा के कारण ही मानव आज उच्चता के इस ऊँचे शिखर पर पहुँच पाया है। शिक्षा एक अनंत प्यास है जिसका संबंध केवल जीने की कला मात्र से नहीं अपितु वह स्वंय के जीवन के आदर्शों से जुड़ी हुई है। न केवल व्यक्ति के संदर्भ में उपयोगी एवं आवश्यक है बल्कि समाज एवं राष्ट्र की उन्नति और विकास भी शिक्षा पर ही आधारित है। समाजिक चेतना को जगाती है और समाजिक धरोहर की रक्षा भी करती है। शिक्षा अगामी पीढ़ी को हस्तांतरण करती है और उसका विकास करती है। शिक्षा व्यक्तिकता की कँचुली से बाहर लाकर मानव को इस योग्य बनाती है कि वह समाज, राष्ट्र और संपूर्ण संसार के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण अपना सके और कर्तव्यों का निर्वाहन भली प्रकार से कर सकें।

संदर्भ स्रोतः–

1. सर ए. क्रौट, शिक्षा निदेशक, 'रिव्यू ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया इन 1886', पृ. 4
2. हाटिंगटन को रिपन का पत्र, 3 जून, 1881, लूसियन वुल्फ रिचर्ड–''लाइफ ऑफ द फर्स्ट मार्क्विस ऑफ रिपन'' जिल्द 2, पृष्ठ 114.

3. रिपोर्ट ऑफ इंडियन एजुकेशन कमीशन' (कलकत्ता, 1883), पृ. 452.
4. सर अलफ्रेड क्राट, 'रिव्यू ऑफ एजुकेशन इन इंडिया इन 1868 वि स्पेशल रेफरेंस टु दि रिपोर्ट ऑफ एजु. कमीशन', (कलकत्ता, 188), पृ. 31

****